समयसार ग्यारहवीं गाथा का भावार्थ। कल, कितने ही नहीं थे न। हमारे बाबूलालजी नहीं थे। दूसरे आज भावनगरवाले आये है न ? यह तो अधिकार जब (- ऐसा है) चाहे जितनी (बार) लो न ! तुम तो थे कल।

भावार्थ :- यहाँ - इस जगह ग्यारहवीं गाथा में, यहाँ अर्थात इस ग्यारहवीं गाथा में व्यवहारनय को अभूतार्थ और शुद्धनय को भूतार्थ कहा है। `अर्थात' कि जो आत्मा है अभेदवस्तु अनंतगुणों का पिण्ड, उसमें जो गुणभेद को लक्ष्य में ले, उसे व्यवहारनय कहते हैं। जो गुणी वस्तु है अभेदअखण्ड, उसमें जो अनंतगुण हैं, ऐसे गुणीमें से गुण का भेद लक्ष्य में ले उसे यहाँ व्यवहारनय, वर्तमान भेद पक्ष को लक्ष्य में ले उसे यहाँ व्यवहारनय कहा जाता है, अथवा पर्याय को लक्ष्य में ले यह भी भेद है त्रिकाली में, अथवा राग को लक्ष्य में ले यह भी व्यवहारनय कहलाता है।

इसे जाननेवाले नय को व्यवहारनय... और व्यवहारनय का विषय गुणगुणी भेद,

पर्याय और रागादिक उसका विषय है। आहाहा ! इसे यहाँ झूठा कहा है। यहाँ व्यवहारनय को झूठा कहा है, यह किस अपेक्षा से झूठा कहा यह स्पष्टीकरण करते है। और शुद्धनय को भूतार्थ कहा है, ***त्रिकाली जो अभेद चैतन्यस्वरूप भगवान जो ज्ञान का विषय बिलकुल अभेद है, जिसकी अभेददृष्टि से सम्यग्दर्शन होता है। ऐसी जो अखण्ड अभेद चीज उसे यहाँ शुद्धनय कहा है अथवा इसे शुद्धनय का विषय कहा है और उसे सत्य कहा है।*** क्या कहा ? त्रिकाली सत्यार्थवस्तु जो एकरूप अभेद उसे सत्य कहा है और गुणभेद, पर्यायभेद, रागभेद को व्यवहार कहकर उसे `नहीं' - ऐसा कहा है। उसका क्या कारण ? यह बात चलती है। आहाहा !

(श्रोता :- पहले घोटाला करना फिर उसका स्पष्टीकरण करना ?) घोटाला किया ही नहीं, किस अपेक्षा से कहा है इसे लक्ष्य में न ले ?

इसलिये `यहाँ' - ऐसा कहा न ? अन्य जगह तो स्पष्टीकरण सभी किये हैं, अलग-अलग... परन्तु, इस जगह, इस गाथा में, इसलिये `यहाँ' कहा न ? यहाँ कैसी अपेक्षा है। आहाहा ! सूक्ष्म बातें बापू ! धर्म - ऐसा सूक्ष्म है। अनंतकाल में यह बात इसने लक्ष्य में ली नहीं।

वस्तु में... वस्तु जो आत्मा है यह वस्तु अपेक्षा तो अभेद है। अभेद अर्थात जिसमें गुण और गुणी का भेद भी नहीं, यह तो गुणी अखंडवस्तु है, इसमें एक समय की पर्याय होती है यह भी भेद है, यह भी इसमें नहीं और जो दया, दान, व्रत, भक्ति के राग(रूप) परिणाम होते हैं, यह भी व्यवहार का विषय है, यह भी वस्तु में नहीं। आहाहा ! सूक्ष्मबात है बापू ! बहुत सूक्ष्मतत्त्व है।

यहाँ व्यवहारनय को झूठा कहा है, अभूतार्थ अर्थात झूठा। इस जगह (कहा) अन्यत्र तो कहा है व्यवहार सत् है। समझ में आया ? सत् है अर्थात पर्याय है। गुणभेद है, राग है, इतना भी जो यहाँ नहीं कहा उसका क्या कारण है ? इस जगह - ऐसा कहा उसका क्या कारण है ? - ऐसा कहते हैं कि व्यवहारनय असत्य है, अभूतार्थ अर्थात असत्य, अभूतार्थ अर्थात झूठा है, है नहीं। और शुद्धनय वह है भूतार्थ सत्य है। अब इसका स्पष्टीकरण करते हैं।

जिसका विषय विद्यमान न हो, जिसका ध्येय, विषय हो ही नहीं और असत्यार्थ हो, असत्य हो उसे अभूतार्थ कहते हैं। उसे असत्यार्थ अभूतार्थ कहते हैं। आहाहा ! भाई आये है कि नहीं, हसमुखभाई ! ठीक दूर बैठे हैं। कल दोपहर को थे, सुबह नहीं थे। यह (गाथा) के समय नहीं थे न ? दोपहर तो शनिवार है न ! वह होते ही (है) वह, लड़कों की छुट्टी होती है न, साथ में लेकर आये थे न ! बालकों को लेकर आये थे, सौ केला लेकर आये थे। लड़कों को देने के लिए लेकर

आते हैं शनिवार रविवारको हमेशा। यह कल इस विषय के समय नहीं थे।

क्या कहा ? पहले तो - ऐसा कहा कि, व्यवहारनय तो झूठी है, और निश्चयनय वह सच्ची है। तब अब इसका आशय क्या ? कि जिसका विषय विद्यमान न हो जिसका विषय है ही नहीं, जिसका ध्येय जो है यह है ही नहीं और असत्यार्थ हो झूठा हो बिलकुल नहीं हो उसे अभूतार्थ कहते हैं। आहाहाहा !

व्यवहारनय को अभूतार्थ कहने का आशय अब कहते हैं। कि भाई ! इस जगह असत्यार्थ कहा है, इसका आशय क्या है ? इसका विषय नहीं है, क्या ? तब यहाँ तो अभूतार्थ है तब जिसका विषय नहीं - ऐसा कहना है। व्यवहारनय का विषय ही नहीं, इसलिये झूठ कहा है। इसप्रकार जो यहाँ कहने में आया है, उसका कारण क्या ? आहाहा ! व्यवहारनय को अर्थात गुण-गुणी के भेद को विषय करनेवाला, पर्याय को विषय करनेवाला और राग, दया, दान के विकल्पकों जाननेवाला, विषय बनानेवाला, इस नय को झूठा कहने का आशय - ऐसा है कि, और असत्यार्थ नहीं - ऐसा कहने का मतलब - ऐसा है कि, आहाहा ! बहुत सूक्ष्म बात बापू !

शुद्धनय का विषय, अर्थात कि जो आत्मा अखण्ड अभेद वस्तु है, यह शुद्धनय अर्थात सम्यग्ज्ञान का विषय है, यह सम्यग्दर्शन का विषय है, यहाँ 'नय' क्यों कही है कि सम्यग्दर्शन है यह जानता नहीं। यह तो प्रतीतिरूप है। इसलिये शुद्धनय जाननेवाला है शुद्धनय त्रिकाली को जाननेवाला है। इसलिये इसे यहाँ शुद्धनय कहा है। आहाहा ! समझ में आया ? कारण कि जानने का विषय तो यह ज्ञान ही है। इसके अलावा कोई गुण जाननेवाला नहीं। भाई ! वहाँ - ऐसा कहा है न टोडरमलजी (ने) - ऐसा प्रश्न किया है कि निश्चय समकित यह प्रत्यक्ष और व्यवहार समकित यह परोक्ष, शिष्य ने प्रश्न किया है इसमें। तब कहते हैं कि प्रत्यक्ष-परोक्ष कोई भेद समकित के है ही नहीं। यह ज्ञान के भेद हैं, प्रत्यक्ष-परोक्ष। दूसरे किसी गुण के भेद प्रत्यक्ष-परोक्ष हो ही सकते नहीं। भाई ! आहाहा ! समझ में आया ?

शिष्य ने - ऐसा पूंछा था टोडरमल में है, रहस्यपूर्ण चिट्ठी में कि निश्चय जो समकित है वह प्रत्यक्ष त्रिकाली वस्तु की जो प्रतीति करे वह निश्चय प्रत्यक्ष और व्यवहार भेद को जो विषय करे वह परोक्ष व्यवहार समकित। तुम कहते हो - ऐसा है ही नहीं समकित के दो भेद; निश्चय प्रत्यक्ष और (व्यवहार) परोक्ष दो भेद आत्मा के ज्ञान के अलावा प्रत्यक्ष और परोक्ष ऐसे दो भेद दूसरे किसी गुण के हो ही सकते नहीं। समझ में आया ? ***तो आनंद को प्रत्यक्ष कहा है न वहाँ ? अर्थात कि जिसे स्वयं वेदता है इस अपेक्षा से प्रत्यक्ष, यह वस्तु कहीं ज्ञान का विषय नहीं, ज्ञान है यह तो प्रत्यक्ष और परोक्ष है। अब इसके प्रकार सूक्ष्म, बापा ! बहुत अधिक***

भेद, आनंद का वेदन है यह स्वयं वेदता है। यह कोई दूसरा वेदता है - ऐसा नहीं, इसलिये इसे प्रत्यक्ष कहा (है)। शेष जो कुछ प्रत्यक्ष ज्ञान का भाग है यह आनंद का प्रत्यक्ष का भाग नहीं। आहाहा ! समझ में आया ? सूक्ष्मबात है इससे भी आगे है। जिस श्रुतज्ञान को प्रत्यक्ष कहा, इस श्रुतज्ञान को भी ज्ञान का प्रत्यक्ष भेद कहा, यह भी पूरे आत्मा के पूरे असंख्यप्रदेश और आकार को कुछ ऐसे जानता नहीं। (श्रोता :- अनुभव प्रत्यक्ष है) अनुभव का अर्थ :- आनंद का वेदन प्रत्यक्ष है, प्रत्यक्ष अर्थात ? स्वयं वेदता है। प्रत्यक्ष और परोक्ष का भेद यह आनंद का भेद नहीं। भेद-प्रत्यक्ष और परोक्ष तो ज्ञान का भेद है। भाई ! आहाहा ! अभी इसमें एक सूक्ष्म बात है परंतु बहुत सूक्ष्म हो गई।

इसमें यह श्रुतज्ञान स्वयं को प्रत्यक्ष जानता है - ऐसा कहना यह प्रत्यक्षवत् है इसलिये प्रत्यक्ष कहा है। (श्रोता :- अन्यथा यह भी, परोक्ष है।) अन्यथा यह परोक्ष है। जो श्रुतज्ञान स्वयं को जानता है वह अभी परोक्ष है कारण कि श्रुतज्ञान में कहीं असंख्य प्रदेशी आकार इत्यादि सभी को जानता नहीं केवलज्ञान ही एक प्रत्यक्ष है। आहाहाहा ! बहुत सूक्ष्म बातें बापू ! (मोक्ष) मार्ग में इतनी अपेक्षायें है। आहाहा !

यहाँ कहते हैं, व्यवहारनय को झूठा कहा इसका कारण क्या ? व्यवहारनय का विषय क्या है ? कि जिसका विषय ही न हो - ऐसा भी कहते हैं कि नय है, तो उसका विषय न हो ? (श्रोता :- नय का विषय न हो ?) नय है यह विषयी है और उसका विषय तो होता ही हैं।

परंतु यहाँ व्यवहारनय का विषय नहीं - ऐसा कहा है उसका कारण क्या ? समझ में आया ? शांति से समझना भाई ! यह गाथा तो (श्रोता :- अलौकिक है) अन्जान व्यक्ति को तो यह सभी पूरा (समझना मुश्किल) कारण कि यह धर्मी की बात है अभी... सभी उलट-पलट कर डाली, लोगों ने। आहाहा ! ***व्यवहारनय का विषय अभूतार्थ कहने का आशय - ऐसा है कि शुद्धनय का विषय अभेद एकाकाररूप वस्तु जो अभेद अखण्डानंद प्रभु - ऐसा जो अभेद विषय है, एकाकार है एकस्वरूप ही है त्रिकाली एवं नित्य द्रव्य है।***

शुद्धनय का विषय अभेद एकाकार एक स्वरूप, एकाकार अर्थात एकस्वरूप और नित्य द्रव्य, त्रिकाली द्रव्य वह शुद्धनय का विषय है, शुद्धनय उसे ध्येय बनाता है। आहाहाहा ! - ऐसा समझाना चाहते हैं, शुद्धनय का विषय अर्थात शुद्धनय है वह ज्ञान का अंश है उसका विषय कुछ हो कि नहीं ? तब ज्ञान का जो अंश है उसका विषय अभेद एकाकाररूप, अंतर एकरूप त्रिकाली अभेद, नित्यद्रव्य वह शुद्धनय रूप ज्ञान के अंश का विषय है। आहाहाहा !

उसकी दृष्टि में भेद दिखता नहीं। आहाहा ! अपना भगवान आत्मा अभेद की दृष्टि का विषय में आता है; वस्तु अखण्ड अनंतगुणों का पिण्डप्रभु, इसकी जहाँ दृष्टि के (इस) विषयमें दृष्टि लगती है, तब उसे दृष्टि में अभेद दिखता है, इस अभेद में भेद दिखता नहीं। आहाहा ! है ? उसकी दृष्टि में उसकी दृष्टि में अर्थात ? नित्य (की) दृष्टि जो की है सम्यग्दर्शनने और सम्यग्दर्शन का विषय नित्यद्रव्य है, ध्रुव त्रिकाल-त्रिकाल। इस त्रिकालीद्रव्य को विषय बनाया है इसमें भेद, अभेद में भेद दिखता नहीं। आहाहाहा ! उसकी दृष्टि में हो ? त्रिकाली को देखनेवाला सम्यग्दर्शन... यह त्रिकाली अभेद की दृष्टि का विषय है। उसके साथ यहाँ नय भी है, क्योंकि दृष्टि जानती नहीं न ? दृष्टि में जानने का स्वभाव नहीं। सम्यग्दर्शन में प्रत्यक्ष और परोक्ष के भेद नहीं। प्रत्यक्ष और परोक्ष तो ज्ञान के ही भेद है। समझ में आया ? आहाहा ! - ऐसा सूक्ष्म कितना !

इसलिए यहाँ कहते हैं (कि) ***शुद्धनय का विषय अखण्ड स्वरूप पूरण द्रव्य जो वस्तु भगवान, त्रिकाली नित्य द्रव्य वस्तु, नित्य पदार्थ है।*** ऐसी दृष्टि में अभेद में उसे उस अभेद की दृष्टि के समयमें, भेद अभेद में दिखता नहीं। भेद नहीं (होने पर भी) - ऐसा नहीं, भेद इसमें है, एकरूप वस्तु की दृष्टि में गुण अनंत है, गुणी की दृष्टि में अंदरगुण है, परंतु गुण-गुणी का भेद(रूप) विषय वहाँ सम्यग्दर्शन में नहीं। आहाहा !

यह तो गुण-गुणी एकरूप है - ऐसा जो अभेद विषय करनेवाला, उसकी दृष्टि में अंदर भेद होने पर भी अभेद को देखनेवाला भेद को देखता नहीं। उसकी दृष्टि में भेद है ही नहीं। इसलिये उसकी दृष्टि में भेद है ही नहीं, अविद्यमान अर्थात नहीं। आहाहा ! थोड़ा-थोड़ा समझना, धीरे-धीरे समझना भाई ! हमारे बाबूलालजी कल नहीं थे न इसलिये फिर से कहा। आहाहा !

बापू ! यह विषय तो अमृत का समुद्र है। आहाहा ! ***पर्याय को... पर्याय मात्र को यहाँ झूठा कहा (है)। यहाँ तो केवलज्ञान की पर्याय को भी झूठा कह दिया, क्योंकि यह व्यवहारनय का विषय है केवलज्ञान अंश है न ? यह सद्भूत व्यवहारनय का विषय है, राग है यह असद्भूत व्यवहारनय का विषय है। आहाहा ! और मतिज्ञान आदि का जो भेद है यह सद्भूत, आहाहा ! उपचार का विषय है। आहाहा !***

यह सभी अभूतार्थ है, यहाँ तो - ऐसा कहना है, किस अपेक्षा से ? कि त्रिकाली की दृष्टि जब करते हैं अभेद को जब देखते हैं, उसमें भेद दिखता नहीं, इसलिये उसे भेद नहीं - ऐसा कहा जाता है। आहाहा ! अभेद को देखने पर भेद दिखता नहीं अभेद में, इसलिये उसे (भेद) नहीं - ऐसा कहा है। व्यवहारनय नहीं - ऐसा

कहा है। आहाहा ! बहुत ध्यान रखे तो (समझ में आये), व्यापारियों को धंधे के कारण फुरसत नहीं मिले, और धरम के नाम पर बाहर में तप और व्रत में अटक गये। आहाहा ! प्रथम सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान का विषय (ध्येय) क्या है ? आहा ! समझ में आया ? आहाहा !

यहाँ तो आत्मा का जो अनुभव है यह भी दृष्टि का विषय नहीं। (श्रोता :- यह पर्याय है) पर्याय है। आहाहाहा ! भगवान सर्वज्ञ परमात्मा को जो अनंतज्ञान और अनंत आनंदादि प्रगटे, यह तो व्यवहार नय का विषय है, यह निश्चयनय का विषय नहीं। प्रगट हुआ है न ? है त्रिकाल, जो त्रिकाल है, वस्तु स्वरूप से त्रिकाल है उसे देखनेवाले को और उसे सत्यार्थ कहा जाता है। और इस सत्यार्थ को देखनेवाले को उसकी दृष्टि में भेद दिखता नहीं, इसलिये भेद नहीं - ऐसा कहा जाता है। अरे... ऐसी बातें। समझ में आया ? कहां गये कपूरभाई ! कलकत्ता में - ऐसा है नहीं कुछ, सब हैरान होने के रास्ते है ! आहाहाहा !

गजब बात करते हैं न ! यह गाथा तो जैनदर्शन का प्राण है। विश्वदर्शन, जैनदर्शन कोई पक्ष नहीं विश्वदर्शन (है)। छह द्रव्य, इसमें आत्मद्रव्य एक अनंतगुणों का पिण्ड उसे जानना यह जैनशासन है, जैनशासन कोई पक्ष नहीं वस्तु जो जैन स्वरूप है त्रिकाली, यह अभेद को देखना उसकी पर्याय को जैनशासन कहते हैं, पर्याय को हां !

यहाँ तो यह पर्याय का विषय है। यह अभेद है, एकरूप है, नित्य है। आहाहा ! तीनशब्द प्रयोग किये है है न ? अभेद, एकाकार, नित्य। आहाहा ! जो दृष्टि या ज्ञान का अंश... यहाँ तो 'जानना' है न अर्थात, जो ज्ञान का अंश, त्रिकाली नित्य को जाने देखे, उसकी दृष्टि में भेद दिखता नहीं, इसलिये भेद नहीं - ऐसा कहा जाता है। आहाहाहाहा ! कहों, समझ में आया...? उसकी दृष्टि में भेद अविद्यमान, अविद्यमान अर्थात नहीं, असत्यार्थ अर्थात झूठा कहना चाहिए। आहाहा ! यहाँ तक तो कल आया था। बाबूलालजी ! यहाँ तक कल आया था यह तुम्हारे लिये एवं हसमुखभाई तथा सभी आये हैं न नये ! आहाहा !

कि यह क्या है परंतु यह तीनचार पंक्तियों में। आहाहा ! अरे ! बापू ! आहा ! गंभीर मार्ग प्रभु। वीतराग सर्वज्ञ परमेश्वर ! अभी तो सर्वज्ञ कौन है इसका पता नहीं लगे, और सर्वज्ञ की मौजूदगी जगत में है कि नहीं, इसका पता भी नहीं लगे। इसका पता न लगे तो सर्वज्ञस्वभावी आत्मा है कि नहीं, इसकी भी खबर न लगे। आहाहाहा !

सर्वज्ञ प्रगट हुई पर्यायवाले है कि नहीं ? और यह पर्यायवाले प्रगटवाले है तो सर्वज्ञ स्वभाववाला आत्मा है कि नहीं ? आहाहा ! तब सर्वज्ञ स्वभावी अभेद

स्वभाव को देखनेवाले को उसे यह केवलज्ञान की पर्याय और मतिज्ञान की पर्याय और भेद इस अभेद में दिखते नहीं। उसकी दृष्टि (ज्ञान) की अपेक्षा यह भेद है, फिर भी इस दृष्टि की अपेक्षा भेद नहीं - ऐसा कहने में आया है। सुमनभाई ! रात को तो बापूजी कहते थे कि अब एक महिना अवकाश लेंगे अब - ऐसा सत्य।

यह करना है बापू, बाकी तो सभी समझने जैसा है। आहाहा ! भगवान हो न प्रभु ! तुम्हारा स्वरूप ही अंदर भगवान है, नित्यद्रव्य भगवान स्वरूप है त्रिकाली। उसकी जो दृष्टि अथवा इसका जो ज्ञान, उसके ज्ञानका इसमें जो विषय अभेद है, उसमें भेद दिखता नहीं; इसलिये भेद नहीं और झूठा है - ऐसा कहा जाता है। आहाहाहा ! अरे...रे...! कहीं दिमाग नहीं चले, ज्ञान को फिराने की शक्ति न मिले अब यह कहाँ (जाये)। आहाहा !

(श्रोता :- कभी आप अखण्ड कहते, कभी खण्ड कहते हमें इसमें क्या समझना ?) कहा न ! दोनों अपेक्षायें तो कहीं। खण्ड है, परंतु अखण्ड दृष्टि देखनेवाले को खण्ड दिखता नहीं इसलिये खण्ड को झूठा कहा है (श्रोता :-अखण्ड को देखनेवाले को खण्ड क्यों दिखे ?)

इसलिये तो कहते हैं अखण्ड को देखनेवाले को, अभेद को देखनेवाले को, नित्य को देखनेवाले को, अभेद को देखनेवाले को, भेद दिखता नहीं। एकाकार देखनेवाले को अनेकता दिखती नहीं। नित्य देखनेवाले को अनित्य दिखता नहीं यह पुनः ज्यादा स्पष्ट किया लो। आहाहा ! अरे ! प्रभु का मार्ग बापा ! अभी तो सुनना ही मुश्किल से मिले - ऐसी चीज है प्रभु ! क्या कहें ? आहा !

क्या कहा ? कि, अंतर में जिसने ज्ञान के अंश में... प्रमाण में नहीं यहाँ, प्रमाण तो त्रिकाली को जानता और पर्याय को भी जानता दोनों को जाने उसका नाम प्रमाण। इसलिए यहाँ शुद्धनय (कहा है) यह प्रमाण का अवयव, नय है - शुद्धनय प्रमाण है यह त्रिकाली को जाने और वर्तमान को जाने, दोनों को जाने उसका नाम प्रमाण। अब यह प्रमाण का अवयव, वह नय, उसमें वह अवयव जो निश्चय है, शुद्धनिश्चय है, प्रमाण के भाग का एक विषय, निश्चयनय को जाननेवाला है, वह एक विषय है वह एक नय है, यह प्रमाण नहीं। आहा !

यह नय, एक अंश को विषय करता है। नय द्रव्य और पर्याय दोनों को विषय नहीं बनाती, नय एक अंश को विषय करता है, परंतु यह अंश कौन ? कि अभेद और एकाकार नित्य अंश है उसे विषय करता है। आहाहा ! समझ में आया? विषय बनाता है अर्थात क्या ? कि लक्ष्य में लेता है। (श्रोता :- अर्थात इसे जानता है) आहाहा ! उसकी दृष्टि में भेद अविद्यमान असत्यार्थ झूठा कहना चाहिए अब स्पष्टीकरण

करते है कि इसकी दृष्टि सें त्रिकाल वस्तु ज्ञायक प्रभु चैतन्य त्रिकाल आनंद का नाथ नित्य वस्तु (होने से), इसकी दृष्टि में भेद नहीं, इसलिये उस भेद को `नहीं' कहकर झूठा कहने में आया है।

अब - ऐसा नहीं समझना कि भेदरूप कुछ वस्तु ही नहीं। असत्यार्थ कहा झूठा कहा। `नहीं' है कहा। अविद्यमान कहा न ? व्यवहारका विषय है ही नहीं, यह किस अपेक्षा से ? यह त्रिकालदृष्टि के अनुभव की अपेक्षा से, शुद्धनय का ध्येय पूर्ण, अभेद है इसकी अपेक्षा से भेद नहीं - ऐसा कहा। परंतु सर्वथा भेद ही नहीं - ऐसा माने, आहाहा ! है ? - ऐसा नहीं समझना। आहाहा !

इस गाथामें से तो एक थे (पं.) नाथूलाल प्रेमी मुंबई, दिगम्बर पण्डित थे। वह इस गाथामें से निकालते कि यह तो वेदांत के ढाला में ढाली है यह गाथा। यहाँ पर्याय नहीं, पर्याय नहीं, पर्याय झूठी है - ऐसा कहते हैं (परंतु यहाँ) - ऐसा नहीं बापू! वहाँ पर्याय बिलकुल नहीं - ऐसा कहते हैं (वेदांत), परंतु यहाँ तो पर्याय को, द्रव्यदृष्टि में नहीं दिखती, इसलिये पर्याय को झूठी कहा, पर्याय पर्यायकी अपेक्षा (से) है। आहाहाहा ! समझ में आया ? रविवार का दिन यह भावनगरवाले सभी आये न, इसमें आज - ऐसा आया है यह। (श्रोता :- बहुत अच्छी बात है न !) चाहे जितनी बार पढ़ें... यह तो... अमृत का सागर है। आहाहा !

क्या कहा ? कि वस्तु है न आत्मा पदार्थ, इसमें चाहे गुण हों, पर्याय हो, परंतु यह वस्तु है इस दृष्टि से जो देखता है अर्थात ज्ञान दृष्टि तो प्रतीतिरूप है, देखनेवाला तो ज्ञान है, जो नय का अंश ज्ञान का अंश प्रमाण नहीं। प्रमाण का अंश (ज्ञान) तो त्रिकाली को देखे और पर्याय को देखे, परंतु इस प्रमाण का एक अंश जो शुद्धनय जो अभेद को देखे त्रिकाल, ऐसे अभेद में एकाकार में नित्य में भेद, अनेकता और अनित्यता वहाँ होती नहीं, दिखती नहीं। इसलिये व्यवहारनय नहीं - ऐसा कहा है। आहाहाहा !

परंतु इसका अर्थ - ऐसा नहीं कि व्यवहारनय और नय का विषय बिलकुल है ही नहीं। यह तो त्रिकाली की दृष्टि और अभेद की अपेक्षा से, उसकी दृष्टि में अभेद दिखता है इसलिये उसकी दृष्टि की अपेक्षा से भेद नहीं - ऐसा कहा। समझ में आया ? आहाहाहा ! अब, व्यापारियों को फुरसत मिले नहीं न... यह सभी निर्णय करने का। कपूरभाई ! (श्रोता :- कहीं सारे दिन घर आये नहीं।) घर में तो नहीं मिले (परंतु) उपाश्रय में जाय तब भी नहीं मिले मंदिर जाय तो भी न मिले यह बात। आहा...हा ! शांति से समझ में आये - ऐसा है प्रभु ! आत्मा है न ? यह तो आनंद का ज्ञानसागर है। यह ज्ञान किसे न समझे ? आहाहा ! यह तो

अनंतकाल में (सुनी) नहीं, ऐसी अलौकिक बात है। आहाहा !

परंतु... अभेद की दृष्टि में एकनय का शुद्धनय का विषय जो अभेद एकाकार नित्य उसकी दृष्टि में भेद अनेकता और अनित्यता दिखती नहीं, इसलिये भेद अनेकाकार अनेक और अनित्य यह नहीं - ऐसा कहने में आया है (परंतु) यह उसकी दृष्टि में। आहाहा ! समझ में आया ?

अरे ! ऐसी सूक्ष्म बातें करना और... फिर समझ में आया ? कहना। बापू ! यह तो अलौकिक बातें (है) क्या (है) क्या कहें ? अभी तो उलट-पलट बहुत होगई है बापू! दुनियाँ को जानते हैं और पूरे हिन्दुस्तान को जानते हैं दश-दश हजार मील तीन बार घूमे पूरे हिन्दुस्तान में, मोटर से। आहाहा !

यह वस्तु कोई अलग बापू ! यह तो सर्वज्ञ परमेश्वर, उन्हें जो ज्ञान में ज्ञात हुआ, तीनकाल, तीनलोक को जाननेवाली पर्याय को जाना, उसकी आवाज में ओम् ध्वनि उठी। ओम् ध्वनि निकली और उसकी रचना संतो ने आगम में की, उसमें का यह एक आगम है। (समयसार !) उसमें भी ग्यारहवीं गाथा आहा ! '**ववहारोऽभूयत्थो भूयत्थो देसिदो दु सुद्धणओ**' आहाहा ! यह व्यवहार भेद अनेक, एक, पर्याय झूठी है - ऐसा सीधा शब्द लिया है।

'**ववहारोऽभूयत्थो**' - भेद-पर्याय-राग, अनेकपना झूठा है, और '**भूयत्थो देसिदो खलु**' शुद्धनय, त्रिकाल एक वस्तु है वह सत्य है वही सत्य है। त्रिकाल एक वस्तु सत्य है। भेद, अनकेता अनित्यता वह इस दृष्टि के विषय में नहीं दिखता नहीं; इसलिए उसे अविद्यमान व्यवहार कहा है। आहाहा !

'**परंतु - ऐसा नहीं समझना कि भेदरूप कुछ वस्तु ही नहीं। यदि - ऐसा मानने में आये तो, तब जैसे वेदांतवाले, भेदरूप अनित्य को देखकर**'... आहाहाहा ! क्या कहते हैं ? वेदांतवाले सर्वव्यापक एक आत्मा ही कहते हैं बस। पर्याय और अनेकगुण एवं अनेक द्रव्य आदि यह मानते नहीं। अनेक द्रव्य तो नहीं, परंतु अनेकगुण वह मानते नहीं। अनेक गुण तो ठीक आत्मा अनुभव करे (ऐसी) आत्मा की पर्याय को, मानते नहीं। क्योंकि आत्मा और अनुभव करे यह दो भेद हो गया। अरे ! शशिभाई ! यह शशिभाई ! रहे हमारे, वेदांती वैष्णव थे मोढ़-मोढ़, भावनगर में प्रवचन करते हैं। आहाहा !

यहाँ तो कहते हैं कि वेदांतवाले तो एक ही (सर्व) व्याप कहते हैं। एक आत्मा विज्ञानघन इसमे विज्ञान और आत्मा - ऐसा भी नहीं यह तो बस एक एक स्वरूप वस्तु उसमें गुणभेद भी नहीं, पर्याय भेद नहीं विकार नहीं और अनेकता भी नहीं अनेक द्रव्य, यह भी नहीं। आहाहा !

तब, वेदांत मतवाले भेदरूप अर्थात गुण के भेदको कि अन्य पदार्थको तथा पर्याय

को अनित्य देखकर अवस्तु... `मायारूप कहते हैं' यह तो माया है...' मा...या...! या...मा... यह उसमें नहीं। या...मा, मा...या। मा...या...या...मा...। वह नहीं यह वह नहीं पर्याय नहीं, गुणभेद नहीं अनेक नहीं - ऐसा वेदांत का बड़ा मत है। मुसलमान में भी एक सूफी फकीर का भी - ऐसा मत है। सूफी फकीर होते है वह भी एकरूप मानते हैं। (श्रोता :- वह भी वेदांत (जैसे) होते है न ?) वेदांत नहीं, परंतु यहवेदांत जैसे ही माननेवाले सूफी फकीर होते है, एक बार हमने देखा था बोटाद में हम ठीक दरवाजे से बाहर निकले और वह ठीक सामने आते थे, तब बिचारे खड़े रह गये। वैसे तो हमारा नाम बहुत प्रसिद्ध है न! बोटाद संघ में (संप्रदाय में) हजार पन्द्रह सौ मनुष्य सभी संवत १९७४ में (सुनने) आते थे, कहा यह फकीर को ख्याल था, था वैरागी उदास-उदास जैसे हम निकले अतः एक तरफ खड़ा रहा, हमने किसी को पूंछा कि यह है कौन ? कहते कि यह सूफी फकीर है। वेदांती जैसी मान्यतावाले।

एकरूप वस्तु है - ऐसे माननेवाले... हम खुदा है, खुद यारो दूसरा कोई खुदा नहीं, हम खुदा है - ऐसा फकीर था, उदास देखा था, लगभग दो थे। बोटाद के बाहर निकलने का दरवाजा (है), वहाँ हम निकले वहाँ वह भी बिचारे यहाँ आते थे, परंतु एक तरफ खड़े रह गये। इन सूफी फकीरों को यह तत्त्व मिला न हो तब विचारे क्या करें ? वैरागी दिखते थे, चहेरे पर वैराग्य, उदास... दूसरे साधारण लोगों जैसे नहीं दिखते थे। परंतु एकरूप वस्तु है कि हम खुदा है, सब खुदा है। एक ही खुदा है - हम है खुदा खुद यारो।

इसमें एक हो गया है न ? नाम क्या है ? शूली पर चढ़ा था। मनसूर - मनसूर एक था इनमें हुआ है। (श्रोता :- अनहलहक्क) यह नहीं यह तो अनहलहक्क - ऐसा बोला, परंतु उसका नाम क्या (है) ? मनसूर - मनसूर था वह एक ही माने, फांसी पर चढ़ाओ। फांसी पर चढ़ाया था कहे, अनहलहक्क एक खुदा मैं हूँ। खुदा एक ही है। आया है कथा में आता है न ! फांसी पर चढ़ाया, फांसी ऊपर चढ़ा विरोध करते थे न (कहें)। खुद तुम खुदा एक खुदा सब खुदा है। चढ़ायो फांसी पर, तब वह बोला अनहलहक्क - एक खुदा है। दो खुदा नहीं, दो तत्त्व नहीं... चढ़ादो फांसीपर।

यहाँ कहते हैं कि वेदांतवाले भेदरूप अर्थात् अन्य वस्तु को देखकर अपनागुण भेद देखकर अनित्य को देखकर, अवस्तु यह वस्तु ही नहीं - ऐसा कहते हैं। माया स्वरूप है, माया स्वरूप है कि नहीं ? (है) तब दो हो गये, एक आत्मा और एक माया स्वरूप।

यह बड़ी चर्चा हुई थी, एक परमहंस आये थे। मोतीलाल, राजकोट के थे

परमहंस हमारी दीक्षा के समय थे। प्रवचन में बहुतबार आते (संवत) नवासी की साल से, उसने दीक्षा ले ली (सं. पंचावने) में फिर आये थे यहाँ आये थे, राजकोट आये थे। खूबचर्चा की, फिर कहा आप कहते हो कि 'एक ही आत्मा है' - ऐसा मानों कि एक ही आत्मा है - ऐसा कहनेवाला जो है वह - ऐसा कहते हैं, वेदांती कि तुम दुःख से बिलकुल मुक्त हो जाओ तब आनंद आये, तव... - ऐसा कहा था उसका अर्थ दुःख है, उसका अस्तित्व है - दुःख है उसका अस्तित्व है, तब आनंद आत्मा और दुःख दो वस्तु हो गई, और दुःखसे मुक्त हो जाये, तब आनंद आया, तब आत्मा और आनंद की पर्याय, दो वस्तु सिद्ध हो गई।

फिर शुरु से बहुत चर्चा हुई तब स्वीकार किया था, पहले से उन्हें परिचय बहुत था नवासी से (प्रवचन में) तीन तीन हजार व्यक्ति, स्वयं व्याख्यान में आते, पंचानवे में आये थे, फिर कौन जाने क्या हो गया, पत्नी से कुछ (विरोध होगा) परमहंस हो गया दशा श्रीमाली वानिया था। तुम पहचानते थे ? नहीं। फिर तो गुजर गये, यहाँ आये थे खूबचर्चा हुई।

भाई ! तुम - ऐसा कहते हो कि एक ही व्यापक है, तब यह व्यापक है, और व्यापक नहीं - ऐसा माननेवाले, यह कौन ? नहीं माननेवाले कोई चीज है कि नहीं ? सर्वव्यापक नहीं - ऐसा माननेवाले है कि नहीं ? उसे ही सर्व व्यापक कहते हैं न ? तब इसका अर्थ हो गया कि (है) कहनेवाला एक एवं नहीं माननेवाले (दो) हुये, अर्थात नहीं, और माननेवाले है अर्थात द्वैत हो गया, अद्वैत नहीं रहा।

यह वेदांतवाले तो भेद अर्थात अनेक पदार्थो, अनित्य अर्थात पर्याय को देखकर अवस्तु है और माया स्वरूप कहते हैं और सर्वव्यापक - सर्वव्यापक। आहाहा ! सर्व व्यापक एक अर्थात वस्तु एक ही है सर्वव्यापक, दो (नहीं)। अभेद अर्थात। गुणभेद नहीं (कहते हैं) सर्व व्यापक एक और अभेद अर्थात गुण भेद नहीं। नित्य अर्थात पर्याय नहीं, बहुत शब्द सूक्ष्म है इसमें, यह तो सर्वव्यापक एक और अभेद, यह एक को माननेवाले और अभेद अर्थात गुणभेद भी मानतेनहीं और नित्य अर्थात पर्याय मानते नहीं, शुद्धब्रह्म को वस्तु कहते हैं।

ऐसे सर्वव्यापक एक, अभेद, नित्य, शुद्धब्रह्म को वस्तु कहते हैं। आहाहाहा ! वेदांतियों का बड़ा मत है पूरा अमेरिका में गया है यह वेदांती मत, कारण कि बातें करनेवाले को ऐसी बातें अच्छी लगें कि शुद्ध है एवं आत्मा एक है और। आहाहा ! अब तो, आता है वह बोम्बे में, अमेरिका के... हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, हरे कृष्ण (हरे राम) करते हुये निकलते हैं बोम्बे में निकलते है बाबा... अमेरिका के है न यह ? देखा है न, कुछ ज्ञान नहीं होता... हरेकृष्ण। आहाहा ! वह वहाँ से ऊब गये है

एवं बहुत पैसा हो और बहुत पैसेवाले लखपति वहाँ है परंतु शांति कहीं दिखती नहीं अर्थात बिचारे कही अन्य शोधने निकले परंतु सत् क्या है उन्हें यह हाथ में आना कठिन है। आहाहा !

यहाँ कहते हैं कि अज्ञानी, भेद को अर्थात अनेक आत्मायें अनेक द्रव्य को नहीं माननेवाले, गुणभेद को नहीं माननेवाले, पर्याय को नहीं माननेवाले, उसे अवस्तु कहनेवाले और सर्व व्यापक एक अभेद को वस्तु कहते हैं - ऐसा सिद्ध हो... पहले कहा न कि अभेद में भेद देखता नहीं, इसलिये भेद नहीं - ऐसा कहा, परंतु भेद है ही नहीं - ऐसा माने तब तो वह वेदांत जैसा हो जायेगा। आहाहाहा ! समझ में आया ? शांति से समझना... बापू ! यह तो मार्ग (कोई अलग है !) आहाहाहा !

ऐसा सिद्ध हो, और इसलिये सर्वथा एकांत शुद्धनय के पक्षरूप सर्वथा एकांत, अभेद और एकाकार एवं नित्य ही वस्तु को मानने की अपेक्षा से, एकांत शुद्धनय के पक्षरूप, मिथ्यादृष्टि का ही प्रसंग आये, वह तो मिथ्यादृष्टि हो जाये। आहाहा ! ***अनेक द्रव्य न माने, एक द्रव्य में गुण भेद न माने, एक द्रव्य में पर्याय न माने, तब यह शुद्धनय का एकांत पक्ष, मिथ्यादृष्टि हो जायेगा, झूठी दृष्टि होगी।***

अरे ! ऐसी अटपटी बातें। इसलिये एक नाथूरामप्रेमी थे न, गुजर गये वह कहते कि इस गाथा में तो पर्याय को नहीं - ऐसा (कहकर) वेदांत की स्थापना की है। वेदांत की चाल में समयसार को ढाला है (परंतु - ऐसा नहीं) यह तुम्हें खबर नहीं बापू ! किस अपेक्षा से यहाँ कहा है ? पर्याय झूठी, गुणभेद झूठा, अनेकपना झूठा, किस अपेक्षा कहा है ? ***यह त्रिकाली की दृष्टि देखनेवाले को वस्तु की अंतः दृष्टि देखनेवाले को शुद्धनय से पूरे द्रव्य को देखनेवाले को, भेद अनित्य और अनेकता दिखती नहीं, उसकी दृष्टि की अपेक्षा से उसे झूठा कहा है। परंतु भेद और पर्याय और अनेकता नहीं - ऐसा मानने जाओगे तो एकांत मिथ्यात्व होगा।*** आहाहा ! समझ में आया ?

इसलिये सर्वथा... कथंचित अभेद है एवं पर्याय दृष्टि से भेद है। कथंचित शुद्धनय से एक है, गुणपर्याय से अनेक है, कथंचित पूर्ण शुद्ध है, पर्याय की अपेक्षा से यह भी अशुद्ध है, इसप्रकार दोनों अपेक्षा यथार्थ जाने और माने तो यह यथार्थ दृष्टि है। समझ में आया ? आहाहा !

इसलिये, ऐसे एकांतमत का पक्ष आये तो मिथ्यादृष्टि झूठी दृष्टि हो जायेगी। अभेद में भेद नहीं - ऐसा जहाँ कहा और अनेकपना और पर्याय नहीं - ऐसा कहा, यह तो एकरूप की दृष्टि कराने और एकरूप की दृष्टि में पर्याय और गुणभेद दिखता नहीं, अतः `नहीं', - ऐसा कहा है। परंतु गुणभेद और पर्याय नहीं - ऐसा

जो मानने जाओगे, तो सर्वथा एकांत मिथ्यादृष्टि हो जाओगे। आहाहाहाहा ! समझ में आया ?

परंतु जो अभेद को देखता है, यह भी एक ज्ञान का अंश है, और उसका विषय है, तब वहाँ यह दो भेद हो गये। `भूयत्थमस्सिदोखलु' अब तीसरा पद है यहाँ भूतार्थ का आश्रय करता है वह आश्रय करनेवाली पर्याय है और आश्रय है भूतार्थ का, वहाँ दो भेद हो गये। समझ में आया ? भेद नहीं हो तब यह दोनों झूठ सिद्ध होते हैं। परंतु... जिसने निमित्त और राग एवं पर्याय तथा गुणभेद से दृष्टि उठायी और जिसने ज्ञान के अंश को... एक नय है न अर्थात, त्रिकाली नित्यका दूसरा अंश (अनित्य) है उसको लक्ष्यमें से छोड़कर एक त्रिकाली अंश है उसके ऊपर दृष्टि करने से, दूसरा अंश है वह त्रिकाली में दिखता नहीं अतः झूठा कहा था, परंतु सर्वथा नहीं - ऐसा जो मान बैठें तो मिथ्यादृष्टि है। आहाहाहाहा ! समझ में आया ?

इसलिये यहाँ इस गाथा की अपेक्षा से अरे ! अरे ! टीका का (भावार्थ में भरा है न) पंडितजी (जयचन्दजी) का भी यहाँ कहने का आशय है दूसरी जगह तो स्पष्ट बात की है, कि पर्याय है गुणभेद है, अनंतगुणों हैं। परंतु यहाँ जो कहने में, आया है इस अपेक्षा सें, `यहाँ - ऐसा समझना' इस गाथा के प्रसंग में - ऐसा इन्हें ***समझाना कि `जिनवाणी स्याद्वादरूप है', वीतराग परमात्मा की वाणी, स्याद् अर्थात कथंचित कहनेवाली है, कथंचित त्रिकाली अभेद है नित्य है, कथंचित पर्याय अपेक्षा अनित्य है - ऐसा कहनेवाली है। कथंचित अभेद है कथंचित भेद है, कथंचित एक है कथंचित अनेक है, आहाहा ! एक और अनेक गुण है एवं अनेक भी उसका गुण है, त्रिकाली अभेद में भी एक अनेक नामक गुण है।*** ४७ शक्तियों में आती है एक अनेक। आहाहा !

सूक्ष्म बातें वहाँ जाये तो... वस्तु अपेक्षा एक है - ऐसा भी एक गुण है और गुणों की अपेक्षा अनेक है - ऐसा भी उसका एक त्रिकाली गुण है। समझ में आया ? तब अनेक गुण को न माने तो इसने एकरूप द्रव्य माना नहीं। आहाहा !

बहुत सूक्ष्म नहीं करते हाँ ! कुछ-कुछ। आहाहा ! एक अनेक की व्याख्या तो सैंतालीस शक्ति में बहुत ली है। एक है, अनेक है, आहाहा ! कर्त्ता है, कर्म है, करण है, सम्प्रदान है, अपादान है, अधिकरण है। ऐसे अनंतगुण है अंदर (आत्मा में) एकवस्तु है, वस्तु अपेक्षा एक, गुण अनंत है। यह अनंत है सो अनेक है। एकांत अनेक को नहीं माननेवाला यहाँ इसे जो कहने में आया है कि अनेकपना नहीं, यह तो ***जिनवाणी स्यादवाद (रूप) कहनेवाली है त्रिकाली को अभेद बताने के लिये काल***

भेद नहीं। इस प्रकार भेद को एवं अनेक को गौण करके, `नहीं'। - ऐसा कहा है। अरे ! अरे ! शब्दों-शब्दों में फर्क है।

`जिनवाणी स्याद्वादरूप है... प्रयोजनवश', यह क्या कहते हैं ? कि अपने त्रिकाली शुद्ध चैतन्य का प्रयोजन सिद्ध करना है सम्यग्दर्शन प्रगट करना है, और शुद्धनय का विषय पूर्व एकरूप देखना है - इस प्रयोजन की अपेक्षा मुख्य गौण करके कहती हैं। प्रयोजन के वश, फल एवं हेतु की अपेक्षा, मुख्य गौण करके कहते हैं।

अर्थात क्या कहा ? कि त्रिकाली अभेद है वही मुख्य है उसे मुख्य करके उसे सत्यार्थ कहा हैं तथा पर्याय और गुणभेद को गौण करके `नहीं' - ऐसा कहा है, अभाव करके `नहीं' - ऐसा कहा नहीं। समझ में आया ? आहाहा ! अंतर में रखकर `नहीं' - ऐसा कहा है। जैसे तलहटी तों है परंतु ऊपर यहाँ चढ़ना है अर्थात तलहटी नहीं - ऐसा कहा। (है) यह तो चढ़ने की अपेक्षा तलहटी नहीं परंतु तलहटी तलहटी की अपेक्षा है। आहाहा ! इसीप्रकार आत्मा की वर्तमान दशा में पर्याय है। आत्मा में अनंतगुण हैं। उसकी पर्याय में रागादिक है उसे प्रयोजन वश, (गौण किया) (क्योंकि) ***त्रिकाली का आश्रय करे तो सम्यग्दर्शन हो, अभेद का आश्रय करे तो सम्यग्दर्शन हो, इसप्रकार प्रयोजन की अपेक्षा मुख्य है उसे निश्चय कहा त्रिकाली को और पर्याय और भेद है उसे गौण करके `नहीं' (है) कहा है। अभाव करके नहीं - ऐसा नहीं।*** आहाहा ! समझ में आया ?

ऐसा सभी विषय सूक्ष्म... समझना होगा कि नहीं यह बापू ! यह मनुष्यपना चला जाता है आंखे बंद हो जायेगी बापू एकबार... देह छूट जायेगी, दूसरी जगह जाये, आत्मा तो कहीं नष्ट होनेवाला - ऐसा है ? और कहाँ जायेगा फिर भटकने ? आहाहाहा ! ज्ञान नहीं करे एवं पहचान नहीं करे तो फिर भटकना हैं। आहा...हा !

इसलिये कहते हैं एकबार समझने के लिये, त्रिकाली की दृष्टि कराने, नित्य का आश्रय कराने, नित्य यह सच्चा है और अनित्य यह झूठा है, यहाँ नित्य का आश्रय मुख्य करके निश्चय कहा है। अनित्य को गौण करके नहीं - ऐसा कहते में आया है। आहाहा ! प्रयोजन के वश, आवश्यकता के कारण। अर्थात क्या ? कि त्रिकाली वस्तु का आश्रय करने से सम्यग्दर्शन होता है - ऐसी आवश्यक्ता के कारण। आहाहा ! प्रयोजनवश नय को मुख्य गौण करके कहते हैं। `निश्चयनय को मुख्य करके सत्य कहा और व्यवहारनय को गौण करके असत्य कहा'। - ऐसा जिनवाणी का कथन है। आहाहा ! क्यों ? - ऐसा क्यों कहा ?

जिनवाणी स्याद्वाद... स्याद् अर्थात अपेक्षा और वाद अर्थात कथन और अपेक्षा से क्यों कहा ? कि प्रयोजनवश सम्यग्दर्शन और शुद्धनय को सच्चा कहा और उसके

विषय को सच्चा कहा यह क्योंकि उसका आश्रय करने से सम्यग्दर्शन होता है। व्यवहार और पर्याय का आश्रय करने पर सम्यग्दर्शन होता नहीं। आहाहाहा ! प्रयोजन के वश नय को अर्थात किसी नय को... निश्चय को मुख्य करके... मुख्य को निश्चय कहकर... निश्चय को मुख्य कहा - ऐसा नहीं, इन दोनों में बड़ा फर्क, जो मुख्य है त्रिकाली उसे मुख्य करके, वह है - ऐसा कहा और पर्याय और गुण भेद को गौण कहकर, `नहीं' - ऐसा कहा। छोटा भाई !

इसमें यहाँ कहीं कलकत्ते के व्यापार धंधे में मिले - ऐसा नहीं वहाँ, यहाँ हमारे सेठ कहते हैं कि `किस कारण यहाँ आते है वहाँ कहाँ है ?' आहाहा ! यह बापू मार्ग प्रभु ! - ऐसा अलौकिक मार्ग है, आहाहा ! हा ! प्रथम तो इसे समझना कठिन पड़े - ऐसा है, आहाहा ! इसकी शैली इसकी रचना, आहाहाहा ! और अर्थ करनेवाले पण्डित भी कैसे निकले ? उन पण्डितों का अर्थ है। आहाहा ! जयचन्द्र पण्डितजी हैं गृहस्थ थे।

प्रयोजन के वश नय को मुख्य करके कहा है। - ऐसा क्यों कहा ? अभेद को सत्य कहा और मुख्य कहा और पर्याय को गौण एवं असत्य कहा। गौण करके `नहीं' कहा - ऐसा कहने का कारण क्या है ? समझ में आया ? यह बात लेंगे।

(प्रमाण वचन गुरुदेव !)